छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ

किशोर कुमार अग्रवाल

कबीरदास एक क्रांतिकारी संत थे, उन्होंने कभी किसी धर्म या पंथ का विरोध नहीं किया था, उन्होंने सभी धर्मों की संकीर्ण मान्यताओं एवं आडम्बरों का विरोध किया। उन्होंने स्वानुभूति के आधार पर सभी धर्मों में निहित नैतिक आचरण को अपनी विचारधारा में स्थान दिया। इस आधार पर यह पंथ एक मानवतावादी आध्यात्मिक दर्शन है। यह एक धर्म एवं पंथ के रूप में कब स्थापित हुआ इस पर दो तरह के मत हैं– प्रथम यह कि कबीर पंथ स्वयं कबीरदास ने स्थापित किया था। द्वितीय विचार यह कि इसे पंथ के रूप में उनके शिष्यों ने स्थापित किया था। अधिकांश विद्वानों का यही मानना है कि पंथ के रूप में स्थापित करने का कार्य उनके शिष्यों ने किया है। यही कारण है कि अलग-अलग क्षेत्रों में इस पंथ का रूप एक-दूसरे से भिन्न है। इस मामले में कबीर के चार शिष्य प्रबल माने जाते हैं सुरति (श्रुति) गोपाल, भगवान गोसाई, जागु साहब और धर्मगुरु।

सुरति (श्रुति) गोपाल ने कबीर चौरा, काशी शाखा की स्थापना की। दूसरी शाखा बिहार में स्थापित हुई, जो भगवान गोसाईं द्वारा स्थापित भगताही शाखा कहलायी। यह धनौती (बिहार) में है। तीसरी शाखा विद्दपुर शाखा जो बिहार में है, यह जागु साहब शाखा भी कहलाती है, तथा चौथी शाखा छत्तीसगढ़ी शाखा है इसे धर्मदासी शाखा या बड़ी शाखा कहा जाता है। इनके अलावा वर्तमान गुरु गद्दी के आधार पर कबीर पंथ की अनेक शाखाएँ स्थापित हो चुकी हैं, जो अपने को प्रमुख मानती हैं, तथापि विदेशों में स्थित अधिकांश कबीर पंथी मठ अथवा आश्रम छत्तीसगढ़ के वंश गद्दी के प्रचार क्षेत्र के अंतर्गत हैं।1 जिनके पंथ गुरु धर्मदास माने जाते हैं। इस आधार पर छत्तीसगढ़ की कबीरपंथी शाखा का सबसे अधिक प्रसार हुआ है।

कबीर पंथ की छत्तीसगढ़ी शाखा

धनी धर्मदास, जिन्होंने छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ का प्रसार किया। वे कबीरदास जी के प्रमुख शिष्यों में एक थे, इन्हें स्वयं कबीर साहब ने अपना शिष्य बनाकर ज्ञान दिया था। धर्मदास का प्रारंभिक नाम जुड़ावन था। उनका जन्म बांधवगढ़ (रीवा) में संवत् 1452 कार्तिक पूर्णिमा में हुआ था। उनके जन्म के बारे में ग्रंथ जन्मावली धर्मदास में लिखा है।2

"संवत चौदह सौ बावन, दीसा,

कार्तिक शुक्ल पक्ष दिन तीसा।"

उनके पिता कसौधन वैश्य मन महेश एवं माता सुधर्मावती थी।3 उन्हें 8 वर्ष की आयु में यज्ञोपवीत करवाकर गुरु के घर विद्याध्ययन हेतु भेजा गया। उनके गुरु वैष्णव मतावलम्बी स्वामी विठ्ठलेश्वर रूपदास थे। इनसे धर्मदास ने धर्म, दर्शन, वेदों, पुराणों आदि की शिक्षा प्राप्त की।

शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् वे तीर्थाटन करते हुए आप्त, जैन, वैष्णव, सूफी, शाक्त दर्शनों के अभ्यास में पर्याप्त निपुण हो गये।4 तीर्थाटन के अनुभव एवं ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् धर्मदास जी को 28 वर्ष की आयु में माता-पिता के आदेश से गृहस्थ जीवन में प्रवेश करना पड़ा।

संवत् 1480 में उनका विवाह सुलक्षण देवी से हुआ, जिन्हें कबीर पंथ के ग्रंथों में 'आमिन माता' नाम से पुकारा जाता है।5 उनकी तीन संतानें हुई प्रथम पुत्र नारायणदास हुए, इसके पश्चात् एक कन्या हंसोबाई हुई तथा तृतीय संतान के रूप में चूड़ामणि हुए, जिन्हें मुक्तामणि भी कहा गया है।

धर्मदास का कबीर से साक्षात्कार

धर्मदास तीर्थाटन करते हुए मथुरा पहुँचे जहाँ उन्हें सन् 1462 (संवत 1519) में कबीर के प्रथम दर्शन हुए "जब मथुरा तीरथ को जाई, संगम होय दरश तब पाई" (सात शिकारी)

यह घटना धर्मदास के जीवन में परिवर्तनकारी थी। उस समय तक वे मूर्तिपूजा करते थे, जिसे देखकर कबीर ने उन्हें मिथ्या आडम्बरों को त्याग कर सन्मार्ग पर चलने के लिए कहा। उनके उपदेश सुनकर धर्मदास के अंर्तमन में ज्ञान का प्रकाश फैला और वे कबीरदास के अनुयायी बन गये। इसके पश्चात् कबीरदास ने धर्मदास से अपने निवास बांधवगढ़ जाने के लिए कहा तथा वहाँ पहुँचकर, उन्हें एक संत समागम का आयोजन करने का निर्देश दिया, जिसमें उन्होंने स्वयं आने के लिए भी कहा, यहीं पर कबीरदास ने धर्मदास को सत्यनाम की दीक्षा दी थी।6 इस तरह धर्मदास कबीरदास के पट्ट शिष्य बन गये। इस बात का उल्लेख अनुराग सागर में मिलता है–

“धर्मदास पद गहि अनुरागा।

हो प्रभु मोहि कीन्ह सुभागा।।

हे प्रभु, नहि रसना प्रभुताई।

अमित सरन गुण बरनि न जाई।।

महिमा अमित और तुम स्वामी।

केहि विधि बनों अंतर यामी।।

मैं सब विधि अयोग्य अविचारी।

मुझ अधमहि तुम लीन उबारी।।”

कुछ विद्वानों का यह मानना है कि धर्मदास कबीर के समकालीन नहीं थे। डॉ. परशुराम चतुर्वेदी, डॉ. क्राति कुमार भट्ट, डॉ. आर्य प्रसाद त्रिपाठी आदि विद्वानों का मानना है कि धर्मदास का समय मुख्यतः 17वीं सदी का प्रथम या द्वितीय चरण का है, इन्होंने पंथ की गद्दी के कार्यकाल की गणना एवं बांधवगढ़ के राजा रामसिंह के काल को आधार मानते हुए अपना यह मत रखा है। इनका मत है कि कबीरदास ने

धर्मदास को चमत्कारिक दर्शन दिया था। तथापि कबीर पंथ एवं धर्मदास से संबंधित साहित्य में यह माना गया है कि कबीरदास ने स्वयं धर्मदास साहब को उपदेश दिया एवं उनके वंश के बयालिस, उत्तराधिकारी पंथ के गुरु होंगे। यह आशीर्वाद दिया।7

“यह जब तक बयालीस पीढी रहे।

परमधाम की जग में सीढ़ी रहे।।”

छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ का प्रभाव

छत्तीसगढ़ में कबीरपंथ को लाने का श्रेय धनी धर्मदास को दिया जाता है। वे उच्च श्रेणी के आत्मदर्शी संत थे, जो गृहस्थ होते हुए भी परम वैरागी थे।8 वे त्याग, प्रेम, दया, भक्ति, ज्ञान एवं वैराग्य के गुणों के धनी थे। इन्हीं गुणों के कारण उन्हें धनी की संज्ञा दी जाती है। धर्मदास में अपने गुरु की तरह अक्खड़ता और क्रांतिकारी व्यक्तित्व होने के साथ एक शिष्य और भक्त की विनम्रता और भावुकता भी दिखायी पड़ती है। यही कारण है कि उनकी भाषा मधुर एवं आकर्षक है। उनकी रचनाएँ सहजगम्य हैं। उनके साहित्य में छत्तीसगढ़ी और बघेली के शब्द सहज रूप से आ गये।9 उनका एक पद इस प्रकार है–

“साहेब तेरी देखा सेजरिया हो

लाल महल के लाल कंगूरा, लालि लागि कंवरिया हो।

लाल पलंग के लाल बिछौने, लालिन लागि झलरिया हो।

लाल साहेब की लालनि मूरति लालि लालि अनुहरिया हो।

धरमदास बिनवै कर जोरी, गुरु के चरण बलिहरिया हो।”

धर्मदास ने कबीर दर्शन को जनमानस के समक्ष अत्यधिक सरलता से प्रस्तुत किया, जिससे छत्तीसगढ़ की जनता उनकी ओर तेजी से आकर्षित हुई। उनके उपदेशों में मानवता और नैतिकता के साथ ज्ञान और भक्ति का मिश्रण था। वे कबीर की भांति निर्गुण उपासक होने के साथ ही एक भक्त की तरह सगुण उपासक भी थे, इसीलिए उनसे प्रभावित होकर एक-दो व्यक्ति ही नहीं पूरा का पूरा समुदाय ही इनका अनुयायी हो गया। छत्तीसगढ़ की कई जातियों ने धर्मदास एवं उनके उत्तराधिकारी वंश गुरुओं के प्रभाव में आकर कबीर पंथ को अपना लिया एवं उनके अनुयायी बन गये। संत धर्मदास ने कबीर दर्शन का प्रचार छत्तीसगढ़ के साथ ही मध्यभारत उड़ीसा आदि स्थानों में भी किया था। छत्तीसगढ़ में उन्होंने जिन स्थानों पर लम्बे समय तक अपना कर्मक्षेत्र बनाया था उन स्थानों के लोगों ने उनके प्रभाव से कबीर पंथ को अपना लिया था, उनमें से एक स्थान को कबीरधाम भी कहा जाने लगा। इस स्थान का नाम बाद में कवर्धा हो गया, किंतु वर्तमान में पुनः कबीरधाम जिला कहा जाता है, जो कबीर शब्द से निकला है, इसका अर्थ है कबीर का स्थान या निवास।10

कबीरदास ने धनी धर्मदास के 42 वंश के उत्तराधिकारियों को गुरु पद होने का आशीर्वाद दिया था, किंतु उनके बडे पुत्र नारायण दास ने कबीरदास का शीर्षत्व स्वीकार नहीं किया। द्वितीय पुत्र चूड़ामणि संत कबीर के विचारों के अनुयायी हुए। संत धर्मदास ने अपने गुरुवाई का भार चूड़ामणि को सौंपते हुए उनका नाम "मुक्तामणि" दिया।

“अहो चूड़ामनि बैठो भरि, दृढ़ता होय करो गुरुवाई।

वंश बयालीस तुम्हारे वंशा, सकल जीव तारे जग हंसा।।”11

इस तरह चूड़ामणि अर्थात् मुक्तामणि नाम साहेब छत्तीसगढ़ के प्रथम पंथाचार्य हुए। वे प्रारंभ में बांधवगढ़ में थे, किंतु बाद में वहाँ की गद्दी नारायण स्वामी को सौंपकर कबीर पंथ के पवित्र स्थलों को घूमते एवं आचार्यों से मिलते हुए छत्तीसगढ़ आये एवं यहाँ पर कुदुरमाल (कोरबा के निकट) में आश्रम के साथ कबीर दर्शन एवं उनके उपदेशों को एक पंथ के रूप में स्थापित किया। उन्होंने कटक, अमरकंटक आदि स्थानों में भी कबीर चौरा स्थापित करते हुए कुदुरमाल में अपनी कुटिया बनायी। यहीं छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ का प्रथम आश्रम हुआ और यहीं से उन्होंने कबीर पंथ का प्रचार एवं प्रसार किया। मुक्तामणि नाम साहेब से संबंधित अनेक चमत्कारिक कथाओं का उल्लेख मिलता है, जैसे रतनपुर के एक धनी कसौधन वैश्य मोतीसाय के गलित कुष्ट रोग से मुक्ति दिलाना एवं अपनी दिव्यशक्ति से अंतर्ध्यान होकर जगन्नाथ पुरी जाना आना आदि कथाएँ छत्तीसगढ़ के कबीरपंथी साहित्य में प्राप्त होती हैं। इस तरह मुक्तामणि नाम साहब को छत्तीसगढ़ में प्रथम आश्रम स्थापित करने को श्रेय जाता है। ये छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ के वास्तविक संस्थापक माने जाते हैं।

कबीरपंथ के आगमन के समय छत्तीसगढ़ की दशा

सामान्य रूप से संत धर्मदास के छत्तीसगढ़ आगमन का समय लगभग 16वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों से लेकर 17वीं शताब्दी का प्रारंभिक वर्ष माना जाता है। इस समय छत्तीसगढ़ में कल्चुरि वंश का शासन था, जिनकी राजधानी रतनपुर थी। किंतु 13वीं शताब्दी के पश्चात् उनकी शक्ति पतनोन्मुख हो चुकी थी। बा आक्रमण एवं आंतरिक सामंतों के विद्रोह हो रहे थे। 16वीं शताब्दी के लगभग छत्तीसगढ़ का उत्तरी हिस्सा पठानों के आक्रमणों और लूटपाट से पीड़ित था। इनके आक्रमणों का उल्लेख रतनपुर के शासक बहरसाय के कोसिंगा शिलालेख12 से प्राप्त होता है। इस काल में रतनपुर राज्य का विभाजन हो गया गया था। रतनपुर का दूसरा हिस्सा रायपुर शाखा (लाहोरी शाखा) बन गया था। इससे केन्द्रीय शक्ति, दुर्बल होने के कारण सामंतों एवं जमीदारों की ताकत बहुत बढ़ गयी थी, जिसके कारण पूरा छत्तीसगढ़ सामंती राज्यों में विभक्त हो गया था। सन् 1741 में नागपुर के भोंसलों (मराठों) का आक्रमण हुआ एवं कल्चुरि वंश का राज्य समाप्त होकर भोंसला शासन की स्थापना हुई।13 इसी राजनीतिक अव्यवस्था के मध्य छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ का प्रसार हुआ, क्योंकि राजनीतिक दुर्बलता से उत्पन्न प्रशासनिक अव्यवस्था के कारण जनता की स्थिति अत्यंत कष्टमय हो गयी थी। परिणामस्वरूप वे शांति प्राप्त करने के लिए भक्ति एवं सहज

मार्ग की ओर आकृष्ट होने लगे, क्योंकि शासकगण जनता के हित के प्रति उदासीन हो गये थे। अतः लोगों को अब सिर्फ ईश्वर की कृपा का ही सहारा था।

छत्तीसगढ़ की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक दशा देश की दशा से कुछ अलग थी। कबीर पंथ के आगमन के समय तक यह दिल्ली के मुस्लिम राजनीतिक प्रभाव से सुरक्षित था। जाति प्रथा अन्य क्षेत्रों की तरह अधिक कष्ट कारक नहीं थी, क्योंकि स्थानीय परंपराओं के अनुसार अधिकांश शुभ अवसरों पर समाज में शुद्रों की उपस्थिति आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी थी। लोकगीतों में भी कहीं उनके अश्पृश्य होने का उल्लेख नहीं मिलता।14 किंतु अशिक्षा के कारण अंधविश्वास बहुत अधिक फैला हुआ था। तंत्र-मंत्र का छत्तीसगढ़ के समाज में बहुत प्रभाव था। झाड़-फूँक करने वाला बैगा ओझा कहलाता था। वह जादू टोना करने वालों का पता लगाने का कार्य करता था।15 मारण-मोहन, वशीकरण उच्चाटन आदि विधाओं में निपुण स्त्रियों को ग्राम से बहिष्कार, शारीरिक यातना और कभी-कभी प्राण दण्ड की सजा का भाजन होना पड़ता था।16 ऐसे वातावरण में लोगों को सरल सुगम एवं भक्तिपूर्ण कबीर पंथ ने आकर्षित किया, क्योंकि इस पंथ ने सभी मानवों के लिए मनुष्य जाति भेद एवं लिंग भेद के बिना समान रूप से मोक्ष का मार्ग प्रशस्त किया।

“नाम अमल रस चाखे कोई।

ताको जरा मरण न होई।।

आदिनाम को नित गुण गावे।

भव सागरमें बहुरि न आवे।।

आदिनाम है अजर शरीरा।

तन मन से गह सन्त कबीरा।|

आदिनाम मैं भाख सुनाऊँ।

नाम कहे जब मुक्ति पाऊँ।।”17

कबीर पंथ का प्रसार एवं प्रभाव

छत्तीसगढ़ की परिस्थितियाँ कबीर पंथ के प्रसार के लिए उपयुक्त थीं। यहाँ पर राजनीतिक सत्ता के विकेंद्रीकरण के कारण सामंत एवं जमींदार अथवा धनिक वर्ग के लोगों ने गुरुओं के चमत्कार एवं उनकी महानता से प्रभावित होकर मुक्त हस्त से जमीन एवं धन दान दिया। और वे अपने क्षेत्र में चमत्कारिक एवं आध्यात्मिक गुरुओं को रखने की इच्छा करने लगे, क्योंकि ये मानते थे कि ऐसे आध्यात्मिक पुरुष उनकी उन्नति एवं सुरक्षा के कारण बनेंगे। अतः अनेक राजाओं एवं जमींदारों ने गुरुओं को जमीन एवं धन देकर उनकी आश्रम बनाने में सहयोग किया एवं स्वयं अपने परिवार एवं जनता के साथ कबीर पंथ के अनुयायी बन गये। छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ के प्रसार के लिए यह एक महत्वपूर्ण कारण बना। कुछ आश्रमों

की स्थापना की जानकारी इस प्रकार है–जैसे सिंघोडी के रावत मालगुजार के मृत पुत्र को पंथ श्री सूरत सनेही नाम साहब के द्वारा जीवित किये जाने से प्रभावित होकर वह अपनी जनता के सहित उनकी शरण में आ गये और अपना सब कुछ गुरु को समर्पण कर दिया, अतः यहाँ पर सूरत सनेही साहब ने आश्रम एवं वंश गद्दी की स्थापना की। छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ के आश्रमों की स्थापना का कारण वंश गद्दी में उत्तराधिकारी विवाद भी रहा है। अपने को वास्तविक उत्तराधिकारी मानने के कारण वे पुरानी गद्दी से हटकर नये-नये स्थानों पर गद्दी और आश्रमों की स्थापना की। छत्तीसगढ़ के कुछ प्रमुख कबीर आश्रमों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

कुदुरमाल–कबीर पंथ के प्रथम संस्थापक मुक्तामणि साहब थे, जिन्होंने पंथ की परंपराओं के आधार पर संवत् 1570 (सन् 1513) में इसे संस्थापित किया। यह कोरबा जिले में स्थित है। यहाँ पर एक कुटी थी। कोरबा राज्य के तोमर वंश के शासक उनके शिष्य बन गये थे–

"पांजी द्वारा मुक्तामणि गयऊ। कुदुरमाल में प्रकट भयऊ।।

हसदो नदी पग पांजी आया। पिपर घंटहा आसन लाया।।

हंसन मुक्ति पांजी द्वारा। पैठ महामहिमा विस्तारा।।

जग प्रपंच माया के फंदा। सत्या-सत्य ज्ञान की निन्दा।।

पंथा-पंथ सुबोध पसारा। सत्य कबीर पंथ विस्तारा।।"18

दामाखेड़ा–रायपुर बिलासपुर मार्ग में सिमगा के पास दामाखेड़ा नामक स्थान पर सन् 1903 में पंथ के बारहवें आचार्य उग्रनाम साहब ने गद्दी स्थापित की। वर्तमान में यह धर्मदासी शाखा का मुख्य केन्द्र है। उग्रनाम साहेब ने उसी वर्ष यहाँ कबीरपंथ का संत समागम का आयोजन किया, जो पांच माह तक चला। यह कबीर पंथियों का प्रथम धार्मिक मेला माना जाता है। इस स्थान कोबेमेतरा के मालगुजार दाऊ उमराव सिंह द्वारा क्रय कर गुरु को भेंट की गयी थी। यह आश्रम छत्तीसगढ़ी ही नहीं विश्व के समस्त कबीर पंथियों का मुख्य केन्द्र बन गया है। यहाँ पर पंथ के आचार्यों एवं संतों के जीवन चरित्र एवं उनके उपदेशों का प्रचार-प्रसार करने के लिए कबीर पंथी साहित्य का प्रकाशन एवं पुराने कबीर-पंथी साहित्य का अनुवाद एवं प्रकाशन किया जाता है।19

यह कबीर पंथ की अंतरराष्ट्रीय गद्दी है। यहाँ पर माह के बसंत पंचमी से पूर्णिमा तक मेले का आयोजन किया जाता है, यह मेला देश का सबसे महत्वपूर्ण मेला माना जाता है। यहाँ पर देश-विदेश के कबीर-पंथी आते हैं।

खरसिया शाखा–रायगढ़ के समीप खरसिया में भी स्थापित कबीर गद्दी को एक प्रमुख आश्रम माना जाता है, जो कि 13वें गुरु दयानाम साहब के संतान नहीं होने के कारण दत्तक पुत्र को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर उसे गृध्यमुनी साहब नाम प्रदान किया। अतः काशीदास जो अपने को गुरु होने का अधिकारी

समझते थे, खरसिया में अलग गद्दी स्थापित की। उन्होंने भी अपने को गृध्यमुनी नाम दिया था। इस गद्दी की स्थापना के लिए रायगढ़ के राजा चक्रधर ने 1934 में अपने दीवान रामानुज प्रसाद के कहने पर भूमि एवं धन दान दिया। इस तरह इस आश्रम की स्थापना हुई। अतः यह दामाखेड़ा से अलग शाखा हैं। यह भी अपने-आपको मुख्य शाखा मानते हैं। छत्तीसगढ़ के अन्य कबीर पंथी गद्दी एवं आश्रम पंथ के द्वितीय गुरु पंथ श्री सुदर्शन नाम साहब ने बिलासपुर से 34 कि.मी. आगे छत्तीसगढ़ के कल्चुरि शासकों की राजधानी रतनपुर में संवत् 1630 में गुरुगद्दी की स्थापना की। कवर्धा रियासत के राजा उजियार सिंह के अनुरोध पर आठवें आचार्य हक्कनाम साहेब ने कवर्धा कबीरधाम में गद्दी एवं आश्रम की स्थापना की। यहाँ पर चार आचार्यों ने निवास किया था।20 दुर्ग के पास धमधा में भी एक आश्रम की स्थापना हुई थी, किंतु अब वहाँ सिर्फ गुरु की समाधी ही शेष है। धमतरी के हटकेश्वर ग्राम में मुक्तमणि साहेब की दूसरी पत्नी से उत्पन्न पुत्र सुतईदास ने संवत् 1630 में की मठ स्थापित किया।21 इस मठ ने कांकेर, कोमाखान, एवं बस्तर के राजा एवं जमींदारों को शिष्य बनाया था। राजनांदगाँव के निकट खुज्जी नामक जमींदारी के नादिया ग्राम में सेवाराम साहेब ने स्वतंत्र गद्दी संवत् 1882 में स्थापित की।22 रायपुर बलौदा बाजार मार्ग पर बंगोली ग्राम में घासीदास साहेब ने गद्दी स्थापित की थी। ये पंथ के चौथे गुरु आचार्य प्रमोद गुरु बालापीर के छोटे भाई थे।23

वर्तमान में सभी गद्दियों की अनेक उपशाखाएं भी स्थापित हो चुकी हैं। इन धर्मदासी पंथ की गद्दियों के साथ ही यहाँ पर कबीरदास के अन्य शिष्यों के द्वारा स्थापित आश्रमों की भी उपशाखाएँ कई स्थानों पर स्थापित हैं। इसी तरह धर्मदासी शाखा की भी गद्दियाँ छत्तीसगढ़ से बाहर प्रदेशों में भी स्थापित हैं, जैसे मण्डला में प्रमोदगुरु बालापीर साहब ने गद्दी स्थापित की है।24 एवं 'सुरति सनेही' नाम साहब ने छिंदवाड़ा के सिधौंडी में गद्दी स्थापित की है।

कबीर पंथ की छत्तीसगढ़ी शाखा का स्वरूप एवं सिद्धांत

छत्तीसगढ़ का कबीरपंथ अर्थात् धर्मदासी शाखा को मानने वाले अनुयायियों के लिए गुरुओं के द्वारा बताये गए मार्ग पर चलना अग्निपथ कबीरदास के उपदेशों पर आधारित लगभग 50 सिद्धांत हैं, जिसे उनके सभी अनुनायियों को पालन करना अनिवार्य है। इसे ही सत्य मार्ग कहा जाता है।25 इस पंथ का दूसरा महत्वपूर्ण सिद्धांत है ब्रह्मोपचार का। यह पंथ का क्रियात्मक रूप है, अर्थात् पूजा एवं उपासना पद्धति इसमें सबसे प्रमुख है। चौका विधान इसे चौका आरती विधान भी कहा जाता है। यह एक तरह से सात्विक यज्ञ है। चौका आरती चार प्रकार की होती है–1. संतान प्राप्ति की कामना के लिए किया जाने वाला, जन्मौती या सोलहसुत का चौका, 2. मृत व्यक्ति की आत्मा की शांति के लिए चलावा चौका, 3. एक सौ एक पूर्वजों की शांति के लिए एकोत्तरी चौका, 4. नवीन व्यक्तियों के पंथ में दीक्षित होते समय आनंदी चौका होता है।26 सभी चौका पंथ के प्रमुख महन्त ही संपन्न करा सकते हैं। कबीर पंथ में बरसाइत उत्सव का अत्यधिक महत्व है, क्योंकि इस दिन कबीरदास ने नीरू और नीमा को दर्शन दिया था। यह उत्सव हिन्दू धर्म के वट सावित्री की पूजा करने के दिन ही होता है, जिसे हिन्दू धर्मावलम्बी भी बरसाइत कहते हैं।

पंथ में दीक्षा लेने वाले व्यक्ति को तुलसी की कंठी धारण करना आवश्यक होता है। तथा गुरु उसके कान में मंत्रों का उच्चारण कर उपदेश देते हैं। इस पंथ के अनुयायियों के लिए पूर्णिमा व्रत का विशेष महत्व है। इसे सत्यव्रत भी कहा जाता है।27 पंथ के अनुयायी अपने गुरुओं को तीन बार सिर झुकाकर उनके समक्ष बंदगी करते हैं। इस संबंध में यह माना जाता है कि इससे तीन जन्मों का पाप नाश होता है।

छत्तीसगढ़ के साहित्य की उन्नति में भी कबीर पंथ का बड़ा योगदान है। इससे न केवल कबीर पंथ के प्रसार एवं प्रभाव की जानकारी मिलती है, बल्कि छत्तीसगढ़ में साहित्य की उन्नति एवं समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों का भी ज्ञान होता है। संत धर्मदास के द्वारा रचे गये 42 ग्रंथों के अतिरिक्त उनकी बहुत से स्फुट रचनाएँ भी प्राप्त होती हैं। इन रचनाओं में कबीर पंथ के दर्शन, उपदेश एवं सिद्धांतों का उल्लेख है।

“हम सतनाम के बैपारी

कोई लादै कांसा पीतल कोई लादै लौंग सुपारी

हम तो लादै नाम धनी को पूरन खेप हमारी।”

संत धर्मदास के गीतों से पता चलता है कि 14वीं सदी के मध्य से लेकर 15वीं सदी के मध्य तक का सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृति व राजनीतिक वातावरण बहुत उत्तेजनापूर्ण था। बा आक्रमणों के कारण राजनीतिक एवं सामाजिक परिवर्तन की लहर चल रही थी, तथा मानवीय मूल्यों का पतन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता का हनन हो गया था। साहित्य के रूप में धर्मदास की रचनाओं की पूरबी भाव शैली ने छत्तीसगढ़ी रूप धर लिया है। इस प्रकार छत्तीसगढ़ी भाषा एवं साहित्य की शैली का विकास हुआ।

कबीर पंथ का समाज पर प्रभाव

छत्तीसगढ़ में 8वीं शताब्दी तक बौद्धधर्म एवं जैन धर्म का प्रभाव था, किंतु इसके पश्चात् शैव, वैष्णव एवं शाक्त धर्म का प्रभाव बढ़ने लगा। यहाँ की भौगोलिक संरचना ने यहाँ के सामाजिक स्वरूप को बहुत अधिक प्रभावित किया। चूँकि छत्तीसगढ़ में बाहरी लोगों का आना बहुत कम था। चारों ओर पहाड़ एवं जंगलों से घिरे होने के कारण यहाँ के लोग अपने जीवन के लिए बहुधा प्रकृति पर निर्भर रहते हैं और प्रकृति की अनुकंपा प्राप्त करने के लिए तंत्र-मंत्र की शक्तियाँ एवं अनेक देवी-देवताओं पर श्रद्धा रखते हैं। इसलिए यहाँ के लोगों के जीवन में अनेक अंधविश्वास भरे पड़े थे एवं जादू-टोने आदि पर इनका विश्वास था।

विदेशी आक्रमण से सुरक्षित इस क्षेत्र की जनता सामान्य रूप से शांतिप्रिय और अहिंसक है। यहाँ पर आरंभ से ही अधिकांश जनता के कृषक होने के कारण, उन्हें कबीर पंथ की सरलता ने तेजी से अपनी ओर आकृष्ट किया। छत्तीसगढ़ की तेली जाति व्यापार एवं कृषि कार्य करने वाला समुदाय है। रसेल ने भी इनके वैश्य होने का दावा किया है। इस जाति ने बड़ी संख्या में कबीर पंथ को अपना लिया है। अतः इनमें दो समूह बन गया है, कबीरपंथी एवं देवताही। इसी प्रकार मानिकपुरी पनका जाति के अधिकांश सदस्य भी

कबीर पंथी हो गये हैं, क्योंकि उनका मानना है कि कबीरदास जी पानी में प्रगट हुए थे तथा एक बुनकर (पनका) परिवार में उनका पालन हुआ था। अतः ये कबीरदास को अपने ही जाति का समझते हैं। उनमें एक कहावत प्रचलित है–

"पानी से पनका भये बूंदन रचे शरीर।

आगे आगे पनका चले पाछे दास कबीर।।"

इसी तरह धनी धर्मदास कसौधन वैश्य थे, अत: उनकी जाति के अधिकांश कबीर पंथी हो गये हैं। इनके अतिरिक्त छत्तीसगढ़ की अनेक जातियाँ एवं जनजातियाँ भी कबीर पंथ में दीक्षित हो गये हैं एवं उन्होंने इस पंथ के अनुरूप सात्विक जीवन अपना लिया है। इनमें प्रमुख गाड़ा, महरा, हल्बा, गभेल, बनिया (अग्रवाल) वैरागी, केवट आदि जातियों के साथ ही कुछ क्षेत्र के कुर्मी भी इस पंथ में दीक्षित हुए हैं। थोड़ी संख्या में ब्राहमण एवं ठाकुरों ने भी इस पंथ को अपनाया है।

कबीर पंथ के आश्रमों का छत्तीसगढ़ में प्रसार एवं उनकी अनुयायियों की विशाल संख्या इस बात का प्रतीक है कि छत्तीसगढ़ की जनता को कबीर के सरल एवं सहज दर्शन ने अत्याधिक प्रभावित किया था। छत्तीसगढ़ में बिना जाति भेद के इस पंथ में प्रत्येक वर्ग के लोग इसके अनुयायी बने, जिसमें राजा, जमींदार से लेकर गरीब किसान ने भी इस पंथ को अपनाया।

कबीर पंथ के आदर्शों ने छत्तीसगढ़ के संपूर्ण जनजीवन को प्रभावित किया है, अर्थात् वे लोग भी जो पंथ के अनुयायी नहीं हैं, वे भी इसके आदर्शों से प्रभावित हैं। जैसे संतोष की भावना अर्थात् जो भी प्राप्त होता है उसी में संतोषपूर्ण जीवन यापन कर लेना यहाँ स्वाभाव माना जाता है। इसलिए यह क्षेत्र शांत बना रहा। इसी तरह कबीर पंथ में गुरु की अत्यधिक महिमा है इसके प्रभाव स्वरूप छत्तीसगढ़ की संस्कृति में भी प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपने जीवन में गुरु से दीक्षा लेना अनिवार्य है। संत धर्मदास ने कबीर पंथ के अनुयायियों को नवधाभक्ति का उपदेश दिया। इसी तरह यहाँ के जन-जीवन में भी भागवत कथा की नवधा भक्ति का बहुत महत्व है। आज भी छत्तीसगढ़ के गाँव में नवधा रामायण का आयोजन किया जाता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ के आदर्शों का यहाँ के जनमानस पर गहरी छाप पड़ी है। इस पंथ ने छत्तीसगढ़ को देश-विदेश में भी पहचान दिलायी है।

संदर्भ

1.राजेन्द्र प्रसाद, कबीर पंथ का उद्भव एवं प्रसार, सतगुरु कबीर धनी धर्मदास वंशावली, प्रतिनिधि सभा दामाखेड़ा, रायपुर 1994, पृष्ठ 99.

2.जगन्नाथ साहब, धनी धर्मदास का जीवन दर्शन एवं वंश परिचय, दामाखेडा, रायपुर 1984, पृष्ठ 9.

3.बरारी सुकृतदास, धर्मदास का जीवन चरित्र, स्वसंवेद, कार्यालय, बड़ौदा 1948, पृष्ठ 4.

4.शर्मा मुकुन्दानंद, श्री सद्गुरु कबीर महामहिम, कबीर प्रिंटिंग प्रेस बड़ौदा, 1948, पृष्ठ-168.

5.राजेन्द्र प्रसाद, वही पृ. 10.

6.शर्मा यज्ञदत्त, भक्ति साहित्य के आधार स्तंभ, पृष्ठ 120.

7.महंत सुधादास, कबीर मंसूर, वेंकटेश प्रेस बम्बई, पृष्ठ 302.

8.गृध्यमुनी साहब, सदगुरु कबीर की जीवन धारा, दामाखेडा, रायपुर, पृ. 16.

9.सिंह आदर्श बृजभूषण, मध्यप्रदेश के समकालीन साहित्यकार, जबलपुर 1971, पृष्ठ 24.

10.दुर्ग डिस्ट्रीक्ट सेंसेस हैण्डबुक, 1961, पृष्ठ 10.

11.समाधि टीका, हस्तलिखित ग्रंथ अप्रकाशित, दामाखेड़ा.

12.कॉपर्स इंसक्रिप्सन इंडकेरम, जिल्द 4, भाग-2, क्रमांक-105, बिलासपुर जिला गजेटियर, भोपाल 1992, पृष्ठ 17.

13.मिश्र प्रभुलाल, मराठाकालीन छत्तीसगढ़, रायपुर, 1999, पृष्ठ 25.

14.नायडू हनुमंत, छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का लोक तात्विक तथा मनोवैज्ञानिक अनुशीलन, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर, 1987, पृष्ठ 172.

15.शुक्ल हीरालाल, छत्तीसगढ़ का जनजातीय इतिहास, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी 2003, पृष्ठ 117-18.

16.टेम्पल रिचर्ड, रिपोर्ट ऑन दी एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ सी.पी. अप टू अगस्त 1862, गर्वमेंट प्रेस नागपुर, 1923, पृष्ठ 22.

17.युगलानन्द, ज्ञानबोध, लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई 1978, पृष्ठ-21.

18.आशासागर, अप्रकाशित हस्तलिखित ग्रंथ, लेखक अज्ञात, जगन्नाथपुरी उड़िसा

19.देवांगन मीनाक्षी, छत्तीसगढ़ में समाज सुधार (कबीर पंथ के विशेष संदर्भ में) अप्रकाशित शोध प्रबंध र.वि.वि. 2008, पृष्ठ 200.

20.शर्मा गिरधर, कवर्धा दर्पण, पृष्ठ 17.

21.राजेन्द्र प्रसाद, वही, पृष्ठ 94.

22.देवांगन मीनाक्षी, वही, पृष्ठ 213.

23.गुरु गोस्वामी जगन्नाथ साहब, धनी धर्मदास जीवन दर्शन एवं वंश परिचय, दामाखेड़ा रायपुर 1984 पृष्ठ 5.

24.देवांगन मीनाक्षी, वही पृष्ठ 217.

25.सुधादास सुकवि देहलबी, (सं.) सुमिरन सुधा, दामाखेडा, रायपुर पृष्ठ 3.

26.आडिल सत्यभामा, संत धर्मदास (कबीर पंथ के प्रवर्तक) दामाखेड़ा रायपुर, पृष्ठ 133-136.

27.चतुर्वेदी परशुराम, उत्तर भारत की संत परंपरा, लीडर प्रेस इलाहाबाद, संवत 2021, पृष्ठ 271.

किशोर कुमार अग्रवाल,

इतिहासविद् एवं प्राध्यापक (सेवानिवृत्त),

रायपुर (छ.ग.)